IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 5.731
Volume 8, Issue 1, August 2021

लोक प्रशासन में नैतिक मानवीय मूल्य तथा दायित्वबोध

डॉ. जावेद अख्तर
सहायक प्रोफेसर
राजकीय महाविद्यालय अतरौली, अलीगढ़।

सारांशः *केवल मानव प्रजाति में जन्म लेने मात्र से ही कोई व्यक्ति वास्तव में मानव कहलाने का अधिकारी नहीं बन जाता। उसे पूर्णरूप से और सही अर्थों में मानव बनाना पड़ता है। मानव निर्माण का यह कार्य सांस्कृतिक विकास का सर्वप्रथम अंग है। इस प्रक्रिया में व्यक्ति अपने समाज द्वारा पूर्व–अर्जित ज्ञान से, रीति–रिवाजों से, मूल्य–मान्यताओं से, व्यवहार के मान्य तौर–तरीकों से और जीवनादर्शों से परिचित होता है। जीवन निर्वाह के ज्ञान–कौशल सीखता है। इसी क्रम में उसकी जीवनदृष्टि और विश्वदृष्टि भी विकसित होती है, उसका सौंदर्य–बोध और उसके सुरुचि–संस्कार विकसित होते हैं। सांस्कृतिक विकास के उच्चतर स्तर पर व्यक्ति की आंतरिकता का परिष्कार होता है। सामान्य मानवीय दुर्गुणों और दुष्प्रवृत्तियों से मुक्त होकर वह चारित्रिक सद्गुणों से सुसज्जित होता है। सदाचरण की मर्यादाओं से परिचित होता है तथा नैतिक और मानवीय मूल्यों के प्रति निष्ठावान बनता है। ये सद्गुण और मूल्य व्यक्ति को मानवीय गरिमा प्रदान करते हैं। उसे सभ्य और सुसंस्कृत व्यक्ति बनाते हैं। सभी विकसित संस्कृतियों ने, विशेषतः हमारी प्राचीन भारतीय संस्कृति ने, ऐसे मूल्यनिष्ठ मानव निर्माण पर गंभीर मनन–चिंतन किया है। इसके विपरीत आज की अर्थप्रधान, व्यक्तिवादी तथा उपभोक्तावादी औद्योगिक सभ्यता में नैतिक और मानवीय मूल्यों के प्रति प्रायः उपेक्षा का भाव है। फलतः आधुनिक युग में मूल्यनिष्ठ व्यक्तियों का अभाव एक बड़ी युगपीड़ा बन गई है।*

मुख्यशब्दः लोक प्रशासन में नैतिक मानवीय मूल्य तथा दायित्वबोध

1. प्रस्तावना

केवल मानव प्रजाति में जन्म लेने मात्र से ही कोई व्यक्ति वास्तव में मानव कहलाने का अधिकारी नहीं बन जाता। उसे पूर्णरूप से और सही अर्थों में मानव बनाना पड़ता है। मानव निर्माण का यह कार्य सांस्कृतिक विकास का सर्वप्रथम अंग है। इस प्रक्रिया में व्यक्ति अपने समाज द्वारा पूर्व–अर्जित ज्ञान से, रीति–रिवाजों से, मूल्य–मान्यताओं से, व्यवहार के मान्य तौर–तरीकों से और जीवनादर्शों से परिचित होता है। जीवन निर्वाह के ज्ञान–कौशल सीखता है। इसी क्रम में उसकी जीवनदृष्टि और विश्वदृष्टि भी विकसित होती है, उसका सौंदर्य–बोध और उसके सुरुचि–संस्कार विकसित होते हैं। सांस्कृतिक विकास के उच्चतर स्तर पर व्यक्ति की आंतरिकता का परिष्कार होता है। सामान्य मानवीय दुर्गुणों और दुष्प्रवृत्तियों से मुक्त होकर वह चारित्रिक सद्गुणों से सुसज्जित होता है। सदाचरण की मर्यादाओं से परिचित होता है तथा नैतिक और मानवीय मूल्यों के प्रति निष्ठावान बनता है। ये सद्गुण और मूल्य व्यक्ति को मानवीय गरिमा प्रदान करते हैं। उसे सभ्य और सुसंस्कृत व्यक्ति बनाते हैं। सभी विकसित संस्कृतियों ने, विशेषतः हमारी प्राचीन भारतीय संस्कृति ने, ऐसे मूल्यनिष्ठ मानव निर्माण पर गंभीर मनन–चिंतन किया है। इसके विपरीत आज की अर्थप्रधान, व्यक्तिवादी तथा उपभोक्तावादी औद्योगिक सभ्यता में नैतिक और मानवीय मूल्यों के प्रति प्रायः उपेक्षा का भाव है। फलतः आधुनिक युग में मूल्यनिष्ठ व्यक्तियों का अभाव एक बड़ी युगपीड़ा बन गई है।

भारतीय नव–जागरण के तथा स्वतंत्रता–संग्राम के महान नेताओं की एक सामान्य विशेषता थी। प्रायः सभी प्राचीन भारतीय संस्कृति के आध्यात्मिक जीवन दर्शन से और जीवन मूल्यों से प्रभावित और प्रेरित थे। उनके मन में भारत के भविष्य का एक आदर्शात्मक सपना था। इसकी झलक महात्मा गांधी के 'हिंद स्वराज' में, कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर के 'उन्नत भारत की काव्यात्मक

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 5.731
Volume 8, Issue 1, August 2021

अभिव्यक्ति में तथा अन्य देशभक्तों के लेखन में स्पष्ट दिखाई देती है। हमारा स्वतंत्रता–संग्राम शस्त्रबल के आधार पर किसी सत्ताकामी राजनेता द्वारा नहीं लड़ा गया था। वह एक 'महात्मा' द्वारा त्याग, सत्याग्रह और अहिंसा जैसे नैतिक–आध्यात्मिक मूल्यों के आधार पर छेड़ा गया आंदोलन था। ये पारंपरिक मूल्य भारतीय जन–मानस को आसानी से स्पंदित करते हैं। इसीलिए इस मूल्यनिष्ठ स्वतंत्रता आंदोलन को व्यापक जनसमर्थन मिला। इस जन–ज्वार की व्यापकता और तीव्रता ने उपनिवेशी विदेशी शासन को उखाड़ फेंका और 1947 में भारत एक स्वतंत्र, संप्रभु राष्ट्र के रूप में स्थापित हो गया। नवस्वतंत्र देश की राजकीय व्यवस्थाओं को चलाने के लिए एक संविधान का निर्माण किया गया। हमारा वह संविधान आधुनिक मानववादी संवेदनाओं से तथा समतावादी लोकतांत्रिक आदर्शों से अनुप्राणित है। इसका उद्देश्य है एक ऐसे समाज का निर्माण करना जो ऊँच–नीच की दुर्भावनाओं से, शोषण, अन्याय तथा अन्य सामाजिक कुरीतियों से मुक्त हो। जहाँ की व्यवस्थाएँ स्थापित नियम–कानून के अनुरूप संचालित हों, शासकों की मनमर्जी से नहीं। जहाँ सभी व्यक्तियों के अधिकार और उनका सम्मान सुरक्षित हो। जहाँ सभी देशवासी मिल–जुलकर सुखपूर्वक रह सकें और आगे बढ़ सकें। इन आशाओं के साथ हमारा देश एक नए युग में अपनी विकास यात्रा पर निकल पड़ा।

2. नैतिकता का विचार क्षेत्र

जीवन व्यवहार में क्या उचित है और क्या अनुचित, क्या भला है और क्या बुरा, क्या प्रशंसनीय है और क्या निन्दनीय, इनमें अंतर करना मानव की सहज जातिगत प्रवृत्ति है। यही नैतिकता का मूलभाव है। बीज रूप में यह नैतिक संवेदना सभी मनुष्यों में विद्यमान रहती है। परंतु नैतिकता का बीज सामाजिक वातावरण में अंकुरित होता है। वह कैसा आकार लेगा, कितना पल्लवित और पुष्पित होगा यह बाह्य समाज के नैतिक–सांस्कृतिक विकास पर निर्भर करेगा। समाज में पलते–बढ़ते सामान्यजन प्रायः उन्हीं नैतिक मूल्य–मर्यादाओं को तथा व्यवहार प्रकारों को अपना लेते हैं जिन्हें वे अपने समाज में प्रचलित और व्यवहृत पाते हैं। परंतु संवेदनशील और विचारवान प्रबुद्धजन समाज में प्रचलित रीति–नीति और तौर–तरीकों का अपने स्वतंत्र बुद्धि–विवेक से परीक्षण–विश्लेषण करते हैं। उन पर प्रश्न उठाते हैं: क्या यह न्यायपूर्ण है? क्या इसमें सबका हित होगा?

क्या इसके दूरगामी परिणाम कल्याणकारी होंगे? ऐसे प्रश्नों का अन्वेषण करने और उनका उत्तर ढूँढने के क्रम में नैतिक अवधारणाओं और आदर्शों की स्थापना होती है। सदाचरण की नैतिक नियम व्यवस्थाएँ विकसित होती हैं। विद्वज्जनों के दार्शनिक विमर्श से व्यवस्थित होकर ये अवधारणाएँ, आदर्श और नियम नीतिशास्त्र का रूप ले लेते हैं। सभी विकसित सभ्यताओं में इन नैतिक प्रश्नों पर विचार हुआ है, नैतिक मूल्य–आदर्श विकसित किए गए हैं और नीतिशास्त्र लिखे गए हैं। इसका विलोम भी सही लगता है। ये सभ्यताएँ इसीलिए विकसित हो पाईं कि इन्होंने नैतिक प्रश्नों पर विचार किया, उन्हें महत्व दिया और नैतिक आदर्शों को यथार्थ में उतारने का प्रयास किया।

जीवन व्यवहार में आचरण की नैतिक नियम–व्यवस्था स्थापित करने के अतिरिक्त नैतिकता का दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष है, आंतरिक व्यक्तित्व का परिष्कार करके उसमें सद्गुणों और सद्प्रवृत्तियों को प्रतिष्ठित करना और इस प्रकार व्यक्ति के चरित्र को सुगठित करना। व्यक्ति के नैतिक सद्गुण और सद्प्रवृत्तियाँ ही उसे नैतिक आचरण के लिए प्रेरित करती हैं। वे ही उसे सभ्य और सज्जन बनाती हैं।

नैतिकता के इन तीनों पक्षों में विचारों का केंद्र बिंदु 'व्यक्ति' है: व्यक्ति का चरित्र, व्यक्ति का दायित्वबोध, व्यक्ति के आचरण की मर्यादाएँ। अतः इस व्यक्ति केंद्रित नैतिक विमर्श को हम 'व्यक्तिगत नैतिकता' कहेंगे। पारंपरिक नैतिक विमर्श इस व्यक्ति केंद्रित नैतिकता के दायरे में ही सीमित था। उस युग की सरल–सामान्य सामाजिक संरचना के संदर्भ में संभवतः यह विमर्श पर्याप्त था। पर आज के अति–जटिल आर्थिक–औद्योगिक समाज में यह स्थिति बदल गई है। इस जटिल संरचना वाले आधुनिक समाज में

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 5.731
Volume 8, Issue 1, August 2021

जीवन की दशा और दिशा को प्रभावित करने में सामाजिक व्यवस्थाओं का तंत्र और उसकी शक्ति, व्यक्ति की सोच और इच्छाशक्ति से कहीं अधिक शक्तिशाली हो गई है। कई आधुनिक विचारकों का तो यह भी मानना है कि वैश्विक होता यह तंत्र अब मानव के नियंत्रण से भी बाहर हो गया है। उसने मानव को ही अपने नियंत्रण में कर लिया है और उसका उपयोग अपनी शक्ति–सामर्थ्य के विस्तार के लिए कर रहा है। इस अत्यधिक स्तर तथा हमारी सहायता करें। अतः हमें भी दूसरों के साथ ऐसा ही व्यवहार करना चाहिए। इसी सूत्र को दूसरे तरीके से यों व्यक्त किया जा सकता हैः ''दूसरों के साथ हमें ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिए जैसा यदि वे हमारे साथ करें तो हमें बुरा लगेगा, हम आहत होंगे।'' यदि कोई हमें कटुवचन बोलता है, हमारा अपमान करता है, हमारे साथ छल–कपट करता है, हमें पीड़ा में देखकर मुँह फेर लेता है, हमारा अहित करता है तो हमें बुरा लगता है, हमें पीड़ा होती है। अतः ऐसा व्यवहार हमें भी दूसरों के साथ नहीं करना चाहिए। पारस्परिकता के इस सहज–सामान्य नियम को समझने के लिए किसी तर्क की आवश्यकता नहीं है। यही पारस्परिकता व्यक्तियों के समूहों को जोड़कर और बाँधकर उसे समाज का रूप देती है। यही हमारे सभी मानवीय संबंधों की प्रगाढ़ता की आधारशिला है। पर इसके अनुरूप व्यवहार करने के लिए यह आवश्यक है कि हमारे मन में दूसरों के प्रति सद्भावना और मैत्री–भाव हो, हम उन्हें भी अपने ही समान समझें। इसी से नागरिक जीवन में बंधुत्व अथवा भाईचारे का भाव सुदृढ़ होता है और समाज मजबूत होता है। इसी कारण इस नियम को नैतिकता का स्वर्णिम सिद्धांत (Golden Rule of Ethics) कहा जाता है। विश्व की सभी विकसित सभ्यताओं में यह सिद्धांत समान रूप से मान्य है। भारतीय सभ्यता में कहा गया हैः 'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषं न समाचरेत्। बाइबिल का वाक्य है, "Do unto others as you would that they do unto you"

3. दायित्वबोध की भावना से प्रेरित नैतिक आचरण

दायित्वबोध वह नैतिक प्रेरणा है जो हमें दूसरों के प्रति अपने कर्तव्यों को जानने–समझने तथा उनका अनुपालन करने के लिए प्रेरित करती है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। विविध प्रकार के सामाजिक संबंधों के बीच उसका जन्म होता है, लालन–पालन और विकास होता है, वह अपनी आजीविका अर्जित करता है, परिवार बसाता है और जीवन–यापन करता है। इन पारिवारिक–कौटुम्बिक रक्त–संबंधों में निकटता और अपनेपन का भाव होता है। साथ ही एक–दूसरे से कुछ अपेक्षाएँ भी होती हैं। हम आशा करते हैं कि अपने लोग हमारे हितों का ध्यान रखेंगे, सुख–दुख में सहभागी बनेंगे, हमारे विकास में सहायक होंगे। पारिवारिक संबंधों में एक दूसरे की ऐसी अपेक्षाओं को पूरा करना हमारा नैतिक दायित्व है। इससे संबंधों में प्रगाढ़ता आती है और मिठास बढ़ती है। अपने निकटस्थ लोगों के साथ पारस्परिकता का निर्वहन करते हुए सुमधुर संबंध बनाकर जीना जीवन को सुखी बनाता है। ऐसे वातावरण में परिवार, फलते–फूलते हैं और समृद्ध होते हैं। पर पारिवारिक कौटुम्बिक संबंधों की प्रगाढ़ता का एक नकारात्मक पक्ष भी है। हमारे पारंपरिक समाज में सफल लोगों से, विशेषतः उनसे जो अधिकार और प्रभाव युक्त पदों पर आसीन हैं, यह भी अपेक्षा की जाती है कि वे अपने पारिवारिक–कौटुम्बिक स्वजनों को अपने पद और अधिकार से लाभांवित करेंगे, आगे बढ़ने में उनकी सहायता करेंगे, भले ही इससे पक्षपात होता हो। इसके चलते आज हमारे समाज में परिवारवाद और भाई–भतीजावाद फल–फूल रहे हैं। बरसों पहले मेरे एक संबंधी का फोन आया। उन्होंने

4. मानवीय मूल्य का विचार क्षेत्र

विकास–क्रम लाखों वर्षों पहले प्रारंभ हुआ पर पिछली कुछ सहस्राब्दियों में इसकी रफ्तार अधिक तेज हुई है। आशा की जा सकती है कि विकास का यह क्रम आगे भी चलता रहेगा बशर्ते मानव अपने स्वार्थ और अहंकारवश सभी प्राणियों के साझा गृह–नीड़ इस पृथ्वी की जीवनधारण क्षमता को ही विनष्ट कर दे। पिछली कुछ शताब्दियों में हुए वैज्ञानिक, औद्योगिक तथा

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 5.731
Volume 8, Issue 1, August 2021

राजनीतिक–आर्थिक परिवर्तनों के फलस्वरूप उपजी भयावह वैश्विक समस्याओं को देखते हुए महाविनाश की इस संभावना को नकारा नहीं जा सकता। परंतु ऐसा होना अवश्यंभावी भी नहीं है। इस आसन्न संकट से बचा जा सकता है। परंतु उसके लिए प्राथमिक और अनिवार्य आवश्यकता है मानव व्यक्तित्व का आंतरिक और आत्मिक विकास। इसके लिए मनुष्य को अपने व्यक्तिगत तथा समूहगत 'स्व' की संकीर्णताओं से ऊपर उठना होगा। अपनी जीवनदृष्टि और विश्वदृष्टि को व्यापक बनाना होगा। अपनी मूल्य चेतना को विकसित करना होगा। आंतरिक रूप से विकसित मानव ही इस महाविनाश से बच निकलने का मार्ग तलाश कर पाएगा। साथ ही वह एक बेहतर जीवन, बेहतर समाज और बेहतर विश्व की ओर बढ़ने का मार्ग भी प्रशस्त कर सकेगा। बेहतरी के इस प्रयास की प्रेरणाशक्ति होगी मानव की अदम्य जिजीविषा और उसका मार्ग निर्देशन करेगी नैतिक और मानवीय मूल्यों से संश्लिष्ट मानव की विवेकबुद्धि।

बौद्धिक–वैचारिक चिंतन द्वारा प्रतिपादित नैतिक मूल्यों से भिन्न, मानवीय मूल्य भावना प्रधान होते हैं। ये मानव मन की स्वतःस्फूर्त कोमल भावनात्मक अभिप्रेरणाओं से आकार प्राप्त करते हैं। इनका अनुभव करने के लिए बौद्धिक मध्यस्थता की नहीं वरन् सहज मानवीय संवेदना और सहृदयता की आवश्यकता होती है। ऐसे दो केंद्रीय मानवीय मूल्य हैं– प्रेम और करुणा। इनसे उद्‌भूत तथा इनके सहचर मूल्य हैं – दया, क्षमा, सहिष्णुता, उदारता, आदि। ये मानवीय मूल्य व्यक्तियों के बीच भावनात्मक संबंध बनाकर उन्हें आपस में जोड़ते हैं। इनके अभाव में व्यक्ति का जीवन शुष्क, नीरस और यांत्रिक हो जाएगा तथा समाज स्व–केंद्रित, असंबद्ध और परस्पर संघर्षरत व्यक्तियों का समूह मात्र बनकर रह जाएगा। इन नकारात्मक प्रवृत्तियों के विपरीत प्रेम और करुणा जैसे मानवीय मूल्यों से संपृक्त जीवन में सुख–शांति, संतुष्टि, आनन्द और उल्लास का प्रवाह बना रहता है, व्यक्तिगत जीवन में भी और सामुदायिक जीवन में भी।

नैतिक और मानवीय मूल्य दोनों ही घनिष्ठ रूप से अंतःसंबंधित हैं और एक अच्छे जीवन के लिए आवश्यक हैं। ये मिलकर हमारे व्यक्तित्व को परिष्कृत और संवर्धित करते हैं। सभ्य और मानवोचित बनाकर हमें मानवीय गरिमा प्रदान करते हैं। एक के बिना दूसरा भी अप्रभावी हो जाता है। पिछले अध्याय में हमने नैतिक मूल्यों की चर्चा की। इस अध्याय में मानवीय मूल्यों के स्वरूप को तथा उनके व्यवहारिक तात्पर्यों को जानने–समझने का प्रयास करेंगे।

शोध सन्दर्भ

1. अनन्त सदाशिव अल्तेकर, प्राचीन भारतीय शासन पद्धति द्वितीय संस्करण 1959, भारतीय भण्डार इलाहाबाद।
2. Peter Singer, Practical Ethics, Cambridge Press, 1993, pp 289, 290
3. रामधारी सिंह 'दिनकर', संस्कृति के चार अध्याय, लोकभारती प्रकाशन प्रयागराज पृष्ठ 229, सन् 2021
4. जवाहर लाल नेहरू, संस्कृति के चार अध्याय की भूमिका में पृष्ठ (xiii), प्रयागराज
5. लोक प्रशासन में नैतिक और मानवीय मूल्य, लेखक अजित नारायण त्रिपाठी, Page 102, 103, 107, 109, NEW AGE INTERNATIONAL Publication, New Delhi